

उत्तर प्रदेश राज्य

बनाम

पंडित चंद्र भूषण मिश्रा

6 नवंबर, 1979

[आर.एस. सरकारिया और ओ.चिनाप्पा रेड्डी, जे.जे.]

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908-उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियम  
- वही बल जो मूल रूप से संहिता में अधिनियमित किया गया हो।

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 100 के तहत एक द्वितीय  
अपील की अनुमति इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दी गई और मामले को  
उच्च न्यायालय द्वारा आदेश XLI नियम 23 सीपीसी के तहत उच्च  
न्यायालय द्वारा संशोधित कानून के अनुसार नए सिरे से निस्तारण के लिए  
निचली अपीलीय न्यायालय को भेज दिया गया। खंड पीठ के बहुमत ने  
प्रतिवादियों को न्यायालय के शुल्क की वापसी के दावे की अनुमति इस  
विचार पर दी कि न्यायालय द्वारा शुल्क अधिनियम की धारा 13 के तहत  
धनवापसी का आदेश दिया जा सकता है, भले ही रिमांड आदेश XLI, नियम  
23 के संशोधित प्रावधान के तहत किया गया हो।

अपील में यह तर्क दिया गया कि भले ही पहली अनुसूची में नियमों  
का संदर्भ स्वीकार्य था, यह केवल विधानमंडल द्वारा अधिनियमित नियमों

के लिए होनी चाहिए न कि उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित नियमों के लिए।

अभिनिर्धारित: सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के प्रासंगिक प्रावधानों का एक पहलु यह स्पष्ट करता है कि उच्च न्यायालय द्वारा पहली अनुसूची में निहित नियमों को बदलकर बनाए गए नियम, जैसा कि मूल रूप से विधायिका द्वारा अधिनियमित किया गया था, का वही बल और प्रभाव होगा, जैसे कि उनके पास था। प्रथम अनुसूची में सम्मिलित किया गया है और इसलिए आवश्यक रूप से सभी उद्देश्यों के लिए संहिता का हिस्सा बन जाते हैं। यह अभिव्यक्ति 'कोड' और 'नियम' की परिभाषा और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 121, 122 और 127 का स्पष्ट प्रभाव है। [1134 सी-ई]

चंद्र भूषण मिश्रा बनाम श्रीमती जावत्री देवी ए.आई.आर. (56) 1969  
इलाहाबाद 142 - स्वीकृत किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2614/1969

इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील संख्या 3105/1963  
में पारित निर्णय और आदेश के दिनांक 20-12-1967 से उत्पन्न।

जी. एन. दीक्षित और ओ. पी. राणा, अपीलार्थी की ओर से।

प्रतिवादी के लिए एक-पक्षीय।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया -

चिनाप्पा रेड्डी, न्यायाधिपति.

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 100 के तहत दूसरी अपील की अनुमति इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दी गई थी और मामले को कानून बिंदु के अनुसार नए निस्तारण के लिए निचली अपीलीय अदालत में भेज दिया गया था। प्रतिप्रेषण का आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के आदेश XLI नियम 23 के प्रावधानों के तहत किया गया था, जैसा कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित किया गया था। उच्च न्यायालय के समक्ष सफल अपीलकर्ता ने न्यायालय शुल्क अधिनियम, 1870 की धारा 13 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें दूसरी अपील में भुगतान की गई कोर्ट फीस की वापसी का दावा करते हुए कोर्ट फीस अधिनियम, 1870 की वापसी का दावा किया गया। आवेदन जी.सी.माथुर, जे के समक्ष आया, जिन्होंने इस संदेह पर विचार किया कि क्या कोर्ट फीस अधिनियम की धारा 13 उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित आदेश एक्सएलआई नियम 23 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत प्रतिप्रेषण के मामले पर लागू होती है और प्रश्न को पूर्ण पीठ को विचार के लिए संदर्भित किया। इसके बाद आवेदन पर जगदीश सहाय पाठक और कीर्ति, न्यायाधिपतियों की पूर्ण पीठ ने सुनवाई की। पाठक और कीर्ति न्यायाधिपतियों ने विचार किया कि कोर्ट फीस अधिनियम की धारा 13 के तहत कोर्ट फीस की वापसी का आदेश दिया जा सकता है, यहां तक कि जहां प्रतिप्रेषण ऑर्डर XLI नियम 23 के संशोधित प्रावधानों के तहत बनाया गया था। जगदीश सहाय, जे.

बहुमत की राय के अनुसार असहमति जताते हुए, अपीलकर्ता द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष भुगतान की गई अदालती फीस वापस करने का निर्देश दिया गया। यूपी राज्य संविधान के अनुच्छेद 133(1)(सी) के तहत एक प्रमाण पत्र प्राप्त किया है और इस अपील को प्राथमिकता दी है।

न्यायालय शुल्क अधिनियम 1870 की धारा 13, जहाँ तक यह सामग्री है. यह इस प्रकार है:

"यदि कोई अपील या वाद-पत्र, जिसे निचली न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता में वर्णित किसी भी आधार पर खारिज कर दिया हो, जैसा कि आदेश दिया गया है, प्राप्त किया जाए। या यदि किसी मुकदमे को निचली न्यायालय के दूसरे निर्णय के लिए उसी संहिता की धारा 351 में उल्लिखित किसी भी आधार पर अपील में भेजा जाता है, निचली न्यायालय अपीलकर्ता को एक प्रमाणपत्र देगी, जो उसे अपील के ज्ञापन पर भुगतान की गई फीस की पूरी राशि कलेक्टर से वापस प्राप्त करने के लिए अधिकृत करेगी।"

धारा 13, इस प्रकार उसी संहिता की धारा 351 यानी सिविल प्रक्रिया संहिता जो उस समय लागू थी, में उल्लिखित किसी भी आधार पर अपील में भेजे गए मुकदमे की बात करती है। सिविल प्रक्रिया संहिता 1859 की धारा 351

में अपीलीय न्यायालय द्वारा किसी मामले को गुण-दोष के आधार पर निर्णय के लिए निचली न्यायालय में भेजने का प्रावधान है, जहां "निचली अदालत ने किसी भी प्रारंभिक बिंदु पर मामले का निपटारा कर दिया होगा ताकि तथ्य के किसी भी सबूत को बाहर करने के लिए जो अपीलीय न्यायालय में पक्षकारों के अधिकारों के लिए आवश्यक प्रतीत होगा", यदि प्रारंभिक बिंदु पर निर्णय अपीलीय न्यायालय द्वारा उलट दिया गया था। 1859 की संहिता को निरस्त कर दिया गया और 1877 की संहिता द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। 1877 संहिता की धारा 562 काफी हद तक 1859 संहिता की धारा 351 के समान थी। 1882 की संहिता को निरस्त कर दिया गया और उसके स्थान पर सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 लागू की गई। 1908 संहिता के आदेश XLI नियम 23 में अपीलीय न्यायालय द्वारा मामले को निचली न्यायालय अदालत को भेजने का भी प्रावधान है, जहां प्रारंभिक बिंदु पर मुकदमे का निस्तारण किया गया था और अपीलीय न्यायालय द्वारा अपील में ऐसे प्रारंभिक बिंदु के निर्णय को उलट दिया गया था। सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 122 के तहत निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने आदेश XLI नियम 23 के प्रावधानों में संशोधन किया ताकि अपीलीय न्यायालय द्वारा किसी मामले को विचारण न्यायालय में भेजने का प्रावधान किया जा सके। न केवल जब मुकदमे का निर्णय प्रारंभिक बिंदु पर किया गया था और अपील में निर्णय उलट दिया गया था, बल्कि तब भी जब अपीलीय न्यायालय ने न्याय के

हित में इसे आवश्यक समझा। इस अपील में विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या न्यायालय शुल्क अधिनियम 1870 की धारा 13 के तहत कोर्ट फीस की वापसी देने की शक्ति उस मामले में आकर्षित थी जहां अपीलीय न्यायालय ने न्याय के हित में मामले को विचारण न्यायालय में भेज दिया था जैसा कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित आदेश XLI नियम 23 के तहत प्रदान किया गया था। ।

प्रश्न का उत्तर देने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 158 का संदर्भ आवश्यक है। यह इस प्रकार था:

"158. इस संहिता के प्रारंभ से पहले पारित या जारी किए गए प्रत्येक अधिनियम या अधिसूचना में, जिसमें 1859 के अधिनियम VIII के किसी अध्याय या धारा या किसी नागरिक प्रक्रिया संहिता या उसी या किसी अन्य अधिनियम में संशोधन करने वाले किसी भी अधिनियम का संदर्भ दिया गया है। इसके द्वारा निरस्त किया गया, इस तरह के संदर्भ को, जहां तक संभव हो, इस संहिता या इसके संबंधित भाग, आदेश, धारा या नियम के लिए माना जाएगा।"

धारा 158 से यह पता चलता है कि कोर्ट फीस अधिनियम 1879 की धारा 13 में सिविल प्रक्रिया संहिता 1859 की धारा 351 के संदर्भ को सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के आदेश XLI नियम 23 के संदर्भ के रूप में पढ़ा

जाना चाहिए। विद्वान अधिवक्ता की दलील यह थी कि संहिता की धारा 158 के अनुसार सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के किसी भी प्रावधान का संदर्भ धारा 1 से धारा 158 तक के प्रावधानों से युक्त मुख्य संहिता के मुख्य भाग में होने वाले प्रावधान से होना चाहिए। प्रथम अनुसूची में नियमों के प्रावधानों को नहीं। उन्होंने आगे कहा कि भले ही पहली अनुसूची में नियमों का संदर्भ स्वीकार्य था, यह केवल विधायिका द्वारा अधिनियमित नियमों के लिए होना चाहिए, न कि उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित। सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 158 में 'आदेश' और 'नियम' के स्पष्ट संदर्भ को ध्यान में रखते हुए विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुति के पहले भाग को सीधे खारिज कर दिया जाना चाहिए। प्रस्तुतिकरण के दूसरे भाग में थोड़ी बारीकी से जांच की आवश्यकता है। सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 2(1) में "संहिता" को "नियम" सहित परिभाषित किया गया है। धारा 2(18) में "नियम" को इस प्रकार परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है "पहली अनुसूची में निहित या धारा 122 या धारा 125 के तहत बनाए गए नियम और प्रपत्र। 1908 संहिता की धारा 121 में घोषित किया गया कि पहली अनुसूची में नियम "संहिता के भाग X के प्रावधानों के अनुसार रद्द या परिवर्तित होने तक संहिता के मुख्य भाग में अधिनियमित किए गए" (धारा 121 से 131) तक प्रभावी रहेंगे। धारा 122 ने उच्च न्यायालय को समय-समय पर "अपनी स्वयं की प्रक्रिया या नागरिक संहिता की प्रक्रिया को उनके अधीक्षण के अधीन विनियमित करने के लिए नियम बनाने में सक्षम

बनाया, और ऐसे नियमों द्वारा बनाए गए, वार्षिक, परिवर्तन या सभी या किसी भी नियम में जोड़े गए" पहला शेड्यूल"। धारा 126 ने उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों को राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी के अधीन बना दिया। धारा 127 में प्रावधान है कि इस प्रकार बनाए और स्वीकृत नियमों का वही बल और प्रभाव होगा जैसे कि वे पहली अनुसूची में शामिल किए गए हों। ये प्रावधान यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट करते हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा पहली अनुसूची में निहित नियमों को बदलकर बनाए गए नियम, जैसा कि मूल रूप से विधायिका द्वारा अधिनियमित किया गया था, का वही बल और प्रभाव होगा जैसे कि वे पहली अनुसूची में शामिल थे और इसलिए, आवश्यक रूप से सभी प्रयोजनों के लिए संहिता का भाग बन गए। यह अभिव्यक्ति "कोड" और "नियम" और धारा 121, 122 और 127 की परिभाषा का स्पष्ट प्रभाव है। इनमें से प्रत्येक प्रावधान की विस्तृत जांच करना आवश्यक प्रतीत नहीं होता है, क्योंकि स्थिति हमें बहुत स्पष्ट प्रतीत होती है। इसलिए, हम सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 158 और धारा 2(1) से 2(18), 121, 122 और 127 के प्रभाव के संबंध में चंद्र भूषण मिश्रा बनाम श्रीमती लवत्री देवी <sup>(1)</sup> मामले में पाठक और कीर्ति, न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त किए गए विचार से सहमत हैं।

जगदीश सहाय जे. का मानना था कि उच्च न्यायालय द्वारा किए गए संशोधन केवल काल्पनिक रूप से संहिता में सन्निहित थे और कोर्ट फीस अधिनियम की धारा 13 में 1859 की संहिता की धारा 351 के संदर्भ को इस



प्रकार माना जाना चाहिए केवल आदेश XLI नियम 23 के प्रावधानों का संदर्भ, जैसा कि मूल रूप से विधानमंडल द्वारा पारित किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित नहीं किया गया था। हमारी राय में जगदीश सहाय, जे. का विचार. सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 127 को पूर्ण प्रभाव नहीं देता है जिसमें प्रावधान है कि उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों का वही बल और प्रभाव होगा जैसे कि वे पहली अनुसूची में निहित थे। हमारा विचार है कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा प्रश्न का सही उत्तर दिया गया था और इसलिए अपील खारिज की जाती है।

पीबीआर.

याचिका खारिज की गई।

(1) ए.आई.आर. (56) 1969 इलाहाबाद 142

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक विनायक कुमार जोशी, अधिवक्ता द्वारा किया गया है ।

**अस्वीकरण-** इस निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

\*\*\*\*\*